16

सफल स्कूलों को अलग करने वाले कारक

लर्निंग गारण्टी कार्यक्रम के निष्कर्ष

डी. डी. करोपाडी एवं एस. गिरिधर



डी. डी. करोपाडी



एस. गिरिधर

अ. सन्दर्भः भारत के ग्रामीण सरकारी स्कूल

उत्तर–पूर्व कर्नाटक में यादगीर से लेकर गुजरात में बनासकांठा और साबरकांठा, मध्यप्रदेश में विदिशा और दतिया, राजस्थान में टोंक और सिरोही या उत्तराखण्ड में उत्तरकाशी और ऊधमसिंह नगर में, हर जगह कहानी एक–सी है। हमारे सरकारी प्राथमिक स्कूलों में से 10 प्रतिशत से भी कम यह सुनिश्चित कर पाते हैं कि सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा की तीन बुनियादी कसौटियाँ – पूर्ण नामांकन, विद्यार्थियों का बने रहना या नियमित उपस्थिति, और पढ़ाई के परिणामों की उपलब्धियाँ – पूरी हो रही हैं। जहाँ पूर्ण नामांकन का लक्ष्य शायद हमारे 90 प्रतिशत से भी अधिक स्कूलों में पूरा हो रहा है, वहीं अधिकांश स्कूलों में बच्चों की औसत उपस्थिति 70 प्रतिशत के आसपास होगी। पर दर्दनाक तथ्य यह है कि 10 प्रतिशत से भी कम स्कूल अपने अधिकांश बच्चों के द्वारा पढ़ाई के परिणामों की पर्याप्त उपलब्धि प्रदर्शित कर पाते हैं, जबकि शेष 90 प्रतिशत साफ तौर पर दयनीय प्रदर्शन कर रहे हैं।

केवल थोड़े से स्कूल ही क्यों उन बाधाओं से पार पाने में सफल होते हैं जिनका सामना भारत के हमारे सभी स्कूलों को करना पड़ता है? वे कोई 'महान' स्कूल नहीं हैं – जिनकी महान कल्पना हो, महान उद्देश्य, महान कक्षा–प्रक्रियाएँ और असाधारण समीक्षात्मक सोच तथा अवधारणात्मक योग्यताओं वाले बच्चे हों। पर ये स्कूल बस इसलिए प्रशंसनीय हैं क्योंकि वे यह प्रदर्शित करने में समर्थ हैं कि उनके स्कूल में हर बच्चा एक स्नेहपूर्ण और क्षमतावर्धक वातावरण में सीख रहा है। वे महानता से बहुत दूर हैं – पर उन्होंने खाई को पार कर लिया है। बाधाओं को पार कर लेने की सामर्थ्य के सन्दर्भ में ही हमने उन्हें ''सफल स्कूल'' कहा है। इसी सन्दर्भ और सफलता की सीमित परिभाषा के अन्तर्गत ही हम उन कारकों की पड़ताल कर रहे हैं जो इन स्कूलों को ''सफल'' बनाते हैं।

ब. शोध आधारः लर्निंग गारण्टी कार्यक्रम

लर्निंग गारण्टी कार्यक्रम – जो राज्य सरकार और अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन का संयुक्त प्रयास है – 2002–2005 के दौरान उत्तर पूर्व कर्नाटक के सात जिलों में लागू किया गया था, और बाद के वर्षों में गुजरात, मध्यप्रदेश, राजस्थान और उत्तराखण्ड के आठ जिलों में लागू किया। इस कार्यक्रम का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य मूल्यांकन में परिवर्तन की पैरवी करना और उसे प्रभावित करना था। ताकि उसके द्वारा कक्षा की सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं को भी प्रभावित किया जा सके। इस कार्यक्रम में शामिल स्कूलों का ऐसी पद्धति द्वारा मूल्यांकन करना था जिसका एक अंग ऐसे स्कूलों को 'पुरस्कार और मान्यता' प्रदान करना था जो मूल्यांकन की कसौटियों को पूरा करते थे (या उनसे आगे थे)। कसौटियों की तरह सार्वभौमिक शिक्षा की इन बुनियादी आवश्यकताओं को रखा गया थाः अ) स्कूलों को 100 प्रतिशत नामांकन सुनिश्चित करना था, ब) कम से कम 90 प्रतिशत बच्चों की नियमित उपस्थिति जरूरी थी, और स) कम से कम 60 प्रतिशत बच्चों को योग्यता–आधारित लिखित और मौखिक परीक्षाओं द्वारा किए गए मूल्यांकन में सीखने की समुचित उपलब्धियाँ दर्शाना थीं। सफल स्कूल वे थे जिन्होंने इन तीनों कसौटियों को पूरा किया। इस प्रकार लर्निंग गारण्टी कार्यक्रम ने अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन को शोध और विश्लेषण के लिए आँकड़ों का समृद्ध भण्डार प्रदान किया।

कर्नाटक में लर्निंग गारण्टी कार्यक्रम के लगातार वर्षों में ''सफल'' स्कूलों और ''अन्य स्कूलों'' का अध्ययन उन कारकों को समझने के लिए किया गया जो 'सफल स्कूलों' को 'अन्य स्कूलों' से अलग करते थे। उन कारकों को पहचानने के लिए भी किया गया जिनका 'सफलता' पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। अध्ययन में 240 स्कूल शामिल थे जिनमें लर्निंग गारण्टी कार्यक्रम के अनुसार 68 को सफल माना गया। इसमें (प्रधान शिक्षकों सहित) 900 शिक्षकों से साक्षात्कार लिया गया जिनमें से 250 'सफल' स्कूलों के थे। स्कूलों का मूल्यांकन मात्रात्मक पैमानों के आधार पर किया गया था। जैसे कि स्कूल की अधोसंरचना, स्कूल का प्रबन्धन, उसमें भर्ती बच्चों की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि और ऐसे सामुदायिक कारक जैसे कि स्कूल डेवलपमेन्ट एण्ड मॉनीटरिंग कमेटी (एसडीएमसी) का काम और गाँव में सक्रिय गैर सरकारी संगठनों (एनजीओज़) की उपस्थिति।

> *''केवल थोड़े से स्कूल ही क्यों उन बाधाओं से पार पाने में सफल होते हैं जिनका सामना भारत के हमारे सभी स्कूलों को करना पड़ता है?... हमने स्पष्ट रूप से पाया कि प्रभावी स्कूल नेतृत्व और समर्पित तथा उत्साही शिक्षकों का दल अन्तर पैदा करने वाले प्रमुख कारक हैं।''*

इसी के समानान्तर 21 स्कूलों के एक नमूने का (जिसमें 11 'सफल' और 10 'अन्य' स्कूल थे) विस्तृत गुणात्मक अध्ययन किया गया। प्रशिक्षित जाँचकर्ताओं ने हर स्कूल में कुछ दिन बिताए जिसमें उन्होंने पालकों, बच्चों तथा समुदाय के अन्य लोगों से मुलाकातें और चर्चाएँ कीं तथा अपने अवलोकनों को दर्ज किया। गुणात्मक पैमानों में शिक्षकों का रवैया और समर्पण, शिक्षण की गुणवत्ता और कक्षा की पद्धतियाँ शामिल थीं।

इन अध्ययनों से मिली जानकारियाँ स्कूल नेतृत्व की अति महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करती हैं। वे दिखाती हैं कि कैसे अच्छा समर्पित नेतृत्व – अपनी मजबूरियों के बावजूद और बहुत ज्यादा बाहरी सहयोग के बिना – अपने स्कूलों का सक्षमतापूर्वक और आनन्दपूर्वक चलना सुनिश्चित कर सकता है। वे कुछ अद्भुत नहीं कर रहे होते। ये जानकारियाँ यह बताती हैं कि स्कूल का नेतृत्व कैसे सही बुनियादी बातों को पकड़ता है और साधारण कामों को निरन्तर अच्छी तरह करता है।

स. वे कारक जिनसे कोई फर्क नहीं पड़ता

एक हद तक यह खण्ड कुछ मिथ्या धारणाओं और कुछ रूमानी खयालों को खण्डित करता है। हममें से हरेक व्यक्ति किसी न किसी समय कुछ खास कारकों को बहुत महत्व देता है, लेकिन हमारे अध्ययन ने बहुत साफ तौर पर ऐसे कारकों को दर्शाया जिनसे कोई अन्तर पड़ता हुआ प्रतीत नहीं होता।

वे कारक जो 'सफल' और 'अन्य' स्कूलों में भेद पैदा नहीं करते

बुनियादी सुविधाएँ		प्रधान शिक्षक और शिक्षक का विवरण	
स्कूल से 0.5 किमी के भीतर बस आती है	x	लिंग	x
पक्का भवन	x	जाति/वर्ग	x
प्रांगण में आँगनवाड़ियों का होना	x	आयु	x
चहारदीवारी	x	कुल औसत अनुभव	x
बिजली	x	शिक्षा का स्तर	x
खेल का मैदान	x	उसी गाँव में निवास	x
कक्षाओं के कमरों की औसत संख्या	x	विवाहित	x

x = इस कारक से सफल और अन्य स्कूलों के बीच सांख्यिकीय रूप से कोई महत्वपूर्ण अन्तर नहीं पड़ता।

1. बुनियादी सुविधाओं से सम्बन्धित सूचकांक

सांख्यिकीय दृष्टि से 'सफल' और 'अन्य' स्कूलों में बुनियादी सुविधाओं के अनेक सूचकांकों के कारण कोई महत्वपूर्ण अन्तर प्रतीत नहीं होता, ये सूचकांक हैं: अ) पक्का भवन; ब) प्रांगण में आँगनवाड़ियों का होना; स) स्कूल के नजदीक यातायात सुविधा का होना; द) खेल के मैदान की सुविधाएँ; ई) चहारदीवारी; फ) कक्षाओं के कमरों की संख्या।

2. शिक्षक और प्रधान–शिक्षक का विवरण

एक सफल स्कूल का आम शिक्षक अन्य स्कूलों के आम शिक्षक जैसा ही होता है। इसलिए दोनों श्रेणियों में शिक्षकों की जाति, लिंग, आयु, शैक्षणिक योग्यताएँ और कार्य का अनुभव सांख्यिकीय दृष्टि से बहुत भिन्न नहीं होते। एक अन्य मजबूत धारणा – कि यदि शिक्षक उसी गाँव का है या वहीं रहता है तो इसका स्कूल पर सकारात्मक असर पड़ेगा – भी गलत साबित हुई। अध्ययन से पता चला कि 'सफल' और 'अन्य' दोनों ही तरह के स्कूलों के 31 प्रतिशत शिक्षक उसी गाँव में रहते थे। जबकि दोनों के 69 प्रतिशत शिक्षक कुछ दूरी तय करके रोज स्कूल पहुँचते थे। बहुत साफ है कि शिक्षकों की पृष्ठभूमि किसी भी तरह से स्कूल की सफलता को प्रभावित करती नहीं जान पड़ती। इस प्रकार, अनेक बुनियादी सुविधाओं और शिक्षक समुदाय से सम्बन्धित मापदण्डों का सीखने की उपलब्धियों पर कोई बड़ा असर नहीं पड़ता, और 'सफल' तथा 'अन्य' स्कूलों के बीच इनमें बहुत अन्तर नहीं था।

3. बहु–ग्रेड शिक्षण

हमारे सभी ग्रामीण प्राथमिक स्कूलों में से 80 प्रतिशत बहु–ग्रेड स्कूल हैं। हमारे अध्ययन में भी हमने पाया कि 'सफल' तथा 'अन्य', दोनों श्रेणियों के स्कूलों में बहु–ग्रेड स्कूलों का प्रतिशत समान रूप से ऊँचा था (लगभग 80 प्रतिशत)।

द. वे कारक जिनसे अन्तर पड़ता

हमने स्पष्ट रूप से पाया कि प्रभावी स्कूल नेतृत्व और समर्पित तथा उत्साही शिक्षकों का दल अन्तर पैदा करने वाले प्रमुख कारक हैं। ये खरे गुण 'सफल' स्कूलों के साफ दिखने वाले लक्षण हैं और इसके एकदम विपरीत 'अन्य' स्कूलों में ये नदारद हैं। वे कौन से सूचकांक हैं जो हमें यह निष्कर्ष निकालने पर मजबूर करते हैं?

वे कारक जो 'सफल' और 'अन्य' स्कूलों में अन्तर पैदा करते हैं

स्कूल की विशेषताएँ		शिक्षकों का अतिरिक्त प्रयास	
स्कूल का अच्छा दिखना	✓	चिह्नित बच्चों के लिए अतिरिक्त कक्षाएँ	✓
पीने के पानी की उपलब्धता	✓	गतिविधि–आधारित सीखना	✓
बच्चों के लिए उपयोग किए जा सकने वाले शौचालय	✓	अतिरिक्त पढ़ने की सामग्री	✓
प्रधान शिक्षक उपस्थित	✓	प्रश्नपत्रों द्वारा अभ्यास और पुनर्अभ्यास	✓
विद्यार्थियों और शिक्षकों के ताजा तारीख तक भरे हुए रजिस्टर	✓	शिक्षण के अन्य तरीके	✓
शिक्षक और प्रधान शिक्षक की समय की पाबन्दी	✓	**पालकों, एसडीएमसी और समुदाय का सहयोग**	
कक्षाओं में अध्ययन–अध्यापन की सामग्री	✓	दाखिलों और उपस्थिति पर ध्यान केन्द्रित करना	✓
स्कूल में प्रधान शिक्षक के अनुभव की अवधि	✓	स्कूल को दान	✓
		स्कूल में सक्रिय भागीदारी	✓

✓ = इस कारक से सफल और अन्य स्कूलों में सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण अन्तर पड़ता है।

1. समय के पाबन्द और हमेशा उपस्थित प्रधान शिक्षक तथा शिक्षक

यह अन्तर पैदा करने वाला सर्वोपरि कारक है। सफल स्कूलों में दिखने वाले बाद के सभी अच्छे प्रचलन और भेद इसी विशेष पहलू से निकलते हैं। सफल स्कूलों में सभी प्रधान शिक्षक और 90 प्रतिशत से भी अधिक शिक्षक समय के पाबन्द होते हैं। इसके अलावा स्कूल के समय के दौरान 'सफल' स्कूलों के 92 प्रतिशत से भी अधिक प्रधान शिक्षक स्कूल में मौजूद रहते हैं। इसके विपरीत, 'अन्य' स्कूलों के केवल 73 प्रतिशत प्रधान शिक्षक स्कूल के समय के दौरान स्कूल में पाए जाते हैं। सफल स्कूलों में शिक्षकों की 90 प्रतिशत से अधिक समय की पाबन्दी और उपस्थिति का अवलोकन प्रोब 1 तथा प्रोब 2 की रिपोर्टों तथा माइकल क्रेमर एवं कार्तिक मुरलीधरन द्वारा किए गए अध्ययन ''टीचर एबसैंस इन इण्डिया'' (भारत में शिक्षकों की अनुपस्थिति) के सन्दर्भ में भी महत्वपूर्ण है, जो दर्शाता है कि भारतीय सरकारी स्कूलों में औसतन 25 प्रतिशत शिक्षक अनुपस्थित रहते हैं।

2. व्यवस्थित, सुप्रबन्धित स्कूल पद्धतियाँ

सफल स्कूलों में अच्छे से तेल दी गई मशीन जैसी कार्यक्षमता दिखाई देती है। स्वच्छता, सुगढ़ता और व्यवस्था की दृष्टि से ये स्कूल बेहतर होते हैं। उनमें एक दैनिक प्रातः सभा होती है, जो चुस्त और समय पर होती है। सभी रिकॉर्ड पुस्तिकाएँ – शिक्षक उपस्थिति, छात्र उपस्थिति, दाखिलों के रजिस्टर, सूचना–पटल, कक्षाओं की समय–सारणियाँ आदि – ताजा तारीख तक भरी हुई और ठीक से रखी गई होती हैं। विद्यार्थियों सम्बन्धी आँकड़े तुरन्त उपलब्ध रहते हैं। स्कूल की यूनिफॉर्म, स्टेशनरी और पाठ्यपुस्तकें शैक्षणिक सत्र की शुरुआत में बिना देरी किए सभी विद्यार्थियों को उपलब्ध करा दी गई होती हैं। मध्यान्ह भोजन व्यवस्थित और बिना किसी हड़बड़ी के आयोजित होता है। इन स्कूलों में विद्यार्थियों के बीच साफ तौर पर झगड़े नहीं दिखाई देते। साथ ही उन्हें शारीरिक दण्ड दिया जाना भी स्पष्ट रूप से काफी कम पाया जाता है। स्कूल के पहले और स्कूल के बाद दिन की योजनाओं पर चर्चा और पुनरावलोकन करने के लिए रोज शिक्षकों की नियोजित बैठक होती है।

3. शिक्षकों का समर्पण – आवश्यक से अधिक प्रयास

हमारे शोध ने दर्शाया कि 'सफल' स्कूल बच्चों को अतिरिक्त सहायता देने के लिए साफ नजर आने वाले प्रयास करते थे। ये प्रयास बहुत सघनता से किए जाते थे, और ऐसे कई स्कूलों ने छुट्टी के दिनों में और स्कूल के समय के बाद अतिरिक्त कक्षाएँ लेने का उल्लेख किया। कई स्कूलों ने तुलनात्मक रूप से 'कमजोर' बच्चों को चिह्नित किया और उन्हें विशेष रूप से सहायता प्रदान की। उन्होंने बच्चों को पढ़ने की अतिरिक्त सामग्री प्रदान की। उन्होंने मॉडल प्रश्नपत्र बनाए और बच्चों को उनकी ''ड्रिल एण्ड प्रैक्टिस'' (बार–बार अभ्यास) करवाई। ये सारे उपाय यांत्रिक प्रतीत हो सकते हैं लेकिन वर्तमान स्थिति के सन्दर्भ में वे महत्वपूर्ण सकारात्मक उपायों की तरह देखे गए।

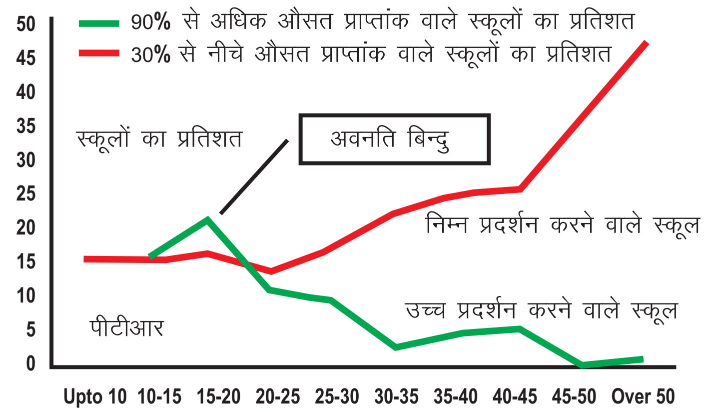
4. पालकों तथा स्कूल डेवलपमेन्ट एण्ड मॉनीटरिंग कमेटी (एसडीएमसी) का सहयोग

सफल स्कूलों में एसडीएमसी के सदस्यों और अध्यक्ष का सहयोग अधिक था। यह सहयोग उपस्थिति बढ़ाने, सीखने की सामग्री की आपूर्ति करने, बुनियादी सुविधाएँ प्रदान करने, दाखिलों में सुधार करने और स्कूलों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के रूप में था। इन सफल स्कूलों में बच्चों की प्रगति पर नजर रखने और शिक्षकों

के साथ चर्चा करने के लिए 73 प्रतिशत पालक नियमित रूप से स्कूल आते रहते थे। 'अन्य' स्कूलों की श्रेणी में पालकों में शिक्षा का अभाव अधिक था; उनमें आधे से अधिक अशिक्षित थे। जहाँ अन्य स्कूलों के 54.7 प्रतिशत पालकों ने कोई औपचारिक शिक्षा नहीं पाई थी, वहीं सफल स्कूलों में ऐसे पालक 41.7 प्रतिशत ही थे।

5. अति महत्वपूर्ण छात्र–शिक्षक अनुपात

लर्निंग गारण्टी कार्यक्रम से प्राप्त प्रायोगिक साक्ष्य छात्र–शिक्षक अनुपात (प्यूपिल–टीचर रेशियो – पीटीआर) की बेहद महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हैं। जिन स्कूलों में पीटीआर 30 से कम होता है उनके अच्छा प्रदर्शन करने की सम्भावना 25 प्रतिशत होती है। दूसरी ओर, 40 से अधिक पीटीआर वाले स्कूलों की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने की सम्भावना 3 प्रतिशत से भी कम होती है। यह सचमुच में शायद ऐसा अकेला कारक है जो शिक्षक के नियंत्रण और दायरे के बाहर होता है। यहाँ दिया गया रेखाचित्र इस पहलू को दर्शाता है।



गुणवत्ता के अध्ययन से मिली जानकारियाँ मात्रात्मक आँकड़ों की पुष्टि करती हैं। 11 अन्य स्कूलों की तुलना में 10 सफल स्कूलों में से अधिकांश में योग्यता बढ़ाने वाला और सहयोगात्मक वातावरण दिखाई दिया।

गुणात्मक अध्ययन से प्राप्त जानकारियाँ

21 स्कूलों में गुणात्मक अध्ययन	मानदण्ड	सफल स्कूल	अन्य स्कूल
प्रधान शिक्षक	प्रधान शिक्षक का समय पर आना	10/10	7/11
	स्कूल की गतिविधियों का सक्रिय पर्यवेक्षण	8/10	5/11
	स्कूल में अतिरिक्त समय देना	5/10	2/11
	सभी विद्यार्थियों को पुस्तकें और आवश्यक स्टेशनरी सुलभ कराना	10/10	4/11
शिक्षक	शिक्षकों द्वारा समय की पाबन्दी का पालन	9/10	1/11
	पारस्परिक सक्रियता वाले कक्षा सत्र	10/10	6/11
	सभी कक्षाओं के लिए कार्ययोजनाएँ	5/10	3/11
	सभी कक्षाओं में अध्ययन–अध्यापन की सामग्री का उपयोग	5/10	0/11
	सभी कक्षाओं में गतिविधि–आधारित सत्र (अध्ययन–अध्यापन सामग्री के साथ या उसके बगैर)	7/10	3/11
	सभी कक्षाओं में गृहकार्य को नियमित रूप से जाँचना	8/10	3/11
	विशेष कक्षाएँ होना	8/10	4/11
	कोई शारीरिक दण्ड नहीं	7/10	3/11
	सभी विद्यार्थियों का समय पर आना	5/10	1/11
	विद्यार्थियों के बीच गम्भीर झगड़ों का न होना	8/10	4/11
पालक और समुदाय सहयोग (एसडीएमसी)	एसडीएमसी के द्वारा 3 दिन में एक बार स्कूल का भ्रमण	10/10	4/11
	प्रधानशिक्षक / शिक्षकों के द्वारा एसडीएमसी के बारे में सकारात्मक राय	10/10	4/11

ई. स्कूल नेतृत्व गुणवत्ता की धुरी है

ऐसे लगभग सभी कारक जो 'सफल' स्कूलों को 'अन्य' स्कूलों से अलग करते हैं, स्कूल प्रमुख द्वारा निर्मित, प्रभावित और संचालित किए जा सकते हैं। इस अर्थ में प्रधान शिक्षक अपने स्कूल की गुणवत्ता स्थापित करने में धुरी जैसी कार्यकारी भूमिका निभाता है। निचले प्राथमिक स्कूलों में अकसर कोई एक शिक्षक ही प्रधान शिक्षक का अतिरिक्त दायित्व ले लेता है। पर, उच्च–प्राथमिक स्कूलों में कम से कम सात शिक्षकों को नेतृत्व और मार्गदर्शन प्रदान करने, भूमिकाएँ निर्धारित करने, समय–सारणियाँ तय करने, प्रशासकीय प्रबन्धन और समूह गतिकी को दिशा देने, प्रदर्शन का पुनरीक्षण करने, मुद्दों को चिह्नित करने और निर्णय लेने तथा एक बड़े शैक्षणिक प्रांगण का पर्यवेक्षण और प्रशासन करने के लिए एक पदेन प्रधान शिक्षक होता है।

यह एक अत्यन्त ही विडम्बनापूर्ण स्थिति है कि ऐसे जटिल कार्य के लिए करीब–करीब किसी भी प्रधान शिक्षक को प्रशिक्षित नहीं किया गया है। स्कूल का नेतृत्व करने के लिए वे या तो नामांकित किए जाते हैं या चुन लिए जाते हैं और वाकई में काम करते हुए ही सीखने और इस जटिल स्थिति को सम्हालने के लिए उसमें धकेल दिए जाते हैं। ये 10 प्रतिशत स्कूल जो अभी 'सफल' हैं, तो इसलिए हैं कि उनके स्कूल–प्रमुख उपयुक्त तैयारी और प्रशिक्षण के बिना भी अच्छा प्रदर्शन कर पाए हैं। यदि हमारी शिक्षा व्यवस्था में प्रधान शिक्षकों को चुनने के लिए एक सुविचारित प्रक्रिया होती और उन्हें प्रशिक्षित करने, उनका मार्गदर्शन करने और सहारा देने के लिए एक सशक्त नेतृत्व विकास कार्यक्रम होता तो अवश्य ही यह आशा की जा सकती थी कि 'अन्य स्कूलों' में से भी अनेक रूपान्तरित होकर 'सफल स्कूल' बन जाते।

डी. डी. करोपाडी अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन , बंगलौर में रिसर्च और डॉक्यूमेन्टेशन के प्रमुख हैं। इससे पूर्व वे भारत की एक अग्रणी बाजार–शोध संस्था के बाजार–शोध निदेशक रहे हैं। 25 साल के कॉर्पोरेट अनुभव के साथ, अब वे पिछले 8 वर्षों से विकास के क्षेत्र में काम कर रहे हैं। उनसे karopady@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

एस. गिरिधर अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बंगलौर के विश्वविद्यालय संसाधन केन्द्र के प्रमुख हैं। उनसे giri@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।



एक सुबह एक माँ अपने बेटे को जगाने गई। उनके बीच कुछ इस तरह से संवाद हुआ–

माँ : उठो बेटा, तुम्हारे स्कूल जाने का समय हो गया है।

बेटा : नहीं माँ मैं स्कूल नहीं जाना चाहता हूँ।

माँ : पर तुम स्कूल क्यों नहीं जाना चाहते हो? कोई दो कारण बताओ।

बेटा : पहली बात कि न तो मुझे बच्चे पसन्द करते हैं और न ही शिक्षक।

माँ : ये तो कोई कारण नहीं हुए। उठो...उठो...और स्कूल जाओ।

बेटा : अच्छा आप मुझे कोई दो ऐसे कारण बताइए जिनके लिए मुझे स्कूल जाना चाहिए ?

माँ : पहली बात तो यह कि तुम 52 साल के हो गए हो। तुम्हें अपनी जिम्मेदारी खुद समझनी चाहिए। और दूसरी बात यह कि तुम स्कूल के प्रिंसिपल हो!